RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17, अंक-2, मार्च अप्रैल मई 2024

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17 अंक - 2 मार्च-अप्रैल-मई-2024

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय ज्ञान परंपरा में धनुर्वेद की भूमिका

राहुल कुमार
शारीरिक शिक्षक
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

धनुर्वेद के विषय में जब हम विचार करते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह केवल युद्ध करने की कला नहीं, बल्कि युद्ध के पीछे निहित सामाजिक, धार्मिक, नैतिक तथा प्रशासनिक दायित्व का विज्ञान है। वैदिक परम्परा में शस्त्र और अस्त्र का प्रयोग केवल शक्तिप्रदर्शन नहीं, बल्कि धर्मस्थापन और समाजरक्षा के लिए अनिवार्य माना गया। यही कारण है कि वैदिक संहिताओं में जहाँ शक्ति का वर्णन मिलता है, वहीं वे यह भी निर्देश देती हैं कि शक्ति का प्रयोग केवल न्याय-संरक्षण के लिए किया जाए। धनुर्वेद उसी उच्च भावना से उद्भूत है।

धनुर्वेद की उपवेदीय स्थिति को लेकर जिस प्रकार विभिन्न मत हैं, उनसे यह भी स्पष्ट होता है कि वैदिक साहित्य में यह विषय अत्यन्त व्यापक रूप से व्याप्त है। यजुर्वेद में इसके लौकिक और युद्ध-संबंधी सिद्धांतों का मूल आधार प्राप्त होता है, जबकि अथर्ववेद में मंत्र-अस्त्र, दैविक अस्त्र तथा मानसिक-ऊर्जा से संबंधित ज्ञान अधिक मिलता है। इस प्रकार यह कहना समीचीन है कि धनुर्वेद यदि शरीर का पराक्रम है, तो अथर्ववेद उसका मानसिक और आध्यात्मिक आयाम है। यही दोनों मिलकर उसे पूर्ण वैज्ञानिक शास्त्र बनाते हैं।

धनुर्वेद में 'धनुः' शब्द का प्रयोग प्रतीकात्मक है। धनुष से संधान और मोक्षण का जो मानसिक संयम, स्थिरता, सामंजस्य और सूक्ष्म कौशल विकसित होता है, वही कौशल अन्य सभी अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग में भी आवश्यक है; अतः धनुष की अवधारणा पूरे शस्त्र-विज्ञान का प्रतिनिधित्व करती है। उपलक्षण का यह नियम संस्कृत साहित्य में सर्वत्र स्वीकार्य है। इसीलिए विश्वकोषकार यह स्पष्ट करते हैं कि धनुर्वेद में केवल धनुष नहीं, बल्कि धनुष के आधार से विकसित समस्त शस्त्र-विद्या समाहित है। अस्त्र और शस्त्र का विवेक भी इसी आधार पर स्थापित किया जाता है। अस्त्र, जो यन्त्र या प्रत्यंचा द्वारा छोड़ा जाता है, वह दूरस्थ लक्ष्य को वेधता है, जबकि शस्त्र हाथ में लेकर समीप के लक्ष्य पर प्रयोग होने वाला होता है। भारत के युद्ध इतिहास में दोनों समान रूप से महत्वपूर्ण रहे हैं, परन्तु धनुर्वेद की दृष्टि समग्रता पाँचों इन्द्रियों, चित्त, प्राण-बल और व्यूह-ज्ञान पर टिकती है।

महाभारत में धनुर्वेद के दस अंगों का जो उल्लेख है, वह युद्ध की पूर्णता का द्योतक है। आदान से रहस्य तक की यह यात्रा केवल यांत्रिक क्रिया नहीं, बल्कि मानसिक कौशल, शारीरिक नियंत्रण और त्वरित निर्णय की माँग करती है। आदान में लक्ष्यभेद की तैयारी का मानसिक ध्यान और संकल्प निहित रहता है। सन्धान में श्वास का नियंत्रण और चित्त की स्थिरता आवश्यक होती है। मोक्षण में क्षण-निर्णय और

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

त्वरित प्रतिक्रिया का सामंजस्य दिखाई पड़ता है। विनिवर्तन में यह अभ्यास और अनुभव आवश्यक है कि कब वार को लौटाना है और कब स्वीकार करके उसका शमन करना है। स्थान, मुष्टि और प्रयोग में शरीर की गति, स्नायु-बल, संयुक्त-चालन, तथा चित्त की सजगता की आवश्यकता सहज ही समझी जा सकती है। प्रायश्चित्त और मण्डल में आक्रमण और रक्षा का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है, जो केवल युद्धकला नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन की शिक्षा भी प्रतीत होता है। रहस्य इस कला की उच्चतम सीमा है, जहाँ लक्ष्यभेद केवल दृष्टि पर नहीं, ध्वनि, अनुभूति, गति और संकेत पर आधारित होता है। यही रहस्य आत्म-बल, प्राणशक्ति और चित्त-बल का परिणाम है, जो आध्यात्मिक योग से जुड़ता प्रतीत होता है।

धनुर्वेद की यह विशेषता थी कि यह केवल भौतिक युद्ध की कला नहीं, बल्कि मानसिक अनुशासन का साधन था। धनुर्वेद का अध्ययन आरम्भ करने से पहले दीक्षा का विधान था। दीक्षा में छात्र अपने शरीर, मन और वाणी तीनों को संयत रखने की प्रतिज्ञा करता था। वह सत्य, ब्रह्मचर्य और गुरु आज्ञा के पालन की शपथ लेता था। इस प्रकार धनुर्वेद का अध्ययन चरित्र-निर्माण से जुड़ा हुआ था। यही कारण है कि प्राचीन काल में धनुर्वेद की शिक्षा सैनिकों को केवल युद्ध जीतने के लिए नहीं, बल्कि न्याय की रक्षा के लिए प्रदान की जाती थी।

अग्निपुराण में वर्णित धनुर्वेद के प्रकार यह स्पष्ट करते हैं कि प्राचीन भारत में युद्धकला केवल हाथ की ताकत पर आधारित नहीं थी, बल्कि वह सामरिक युक्तियों, यन्त्रों के प्रयोग, दूरस्थ लक्ष्यभेद, सैन्य-संगठन और रणनीतिक प्रबंध का विकसित विज्ञान था। यन्त्रमुक्त और पाणिमुक्त की संकल्पना बताती है कि शस्त्रों के प्रकार बहुरूपी थे। संधारित और अमुक्त में युद्धकौशल की वह सूक्ष्मता दिखाई देती है जिसमें शत्रु को निरस्त करना, उसके अस्त्र का शमन करना, या परिस्थिति के अनुसार आक्रमण और रक्षा का समन्वय करना आता था। बाहुयुद्ध तो युद्ध का वह अंग था जिसमें शरीर स्वयं एक अस्त्र बन जाता था। यह शिक्षा केवल भुजा-बल की नहीं, बल्कि त्वरित प्रतिक्रिया, ध्यान, और स्नायु-नियंत्रण की थी।

धनुर्वेद का सामाजिक पक्ष यह था कि सेना केवल युद्धकर्मी नहीं, बल्कि अनुशासन, संगठन और व्यवस्था की मूर्त संकल्पना थी। सैनिक केवल लड़ाकू नहीं, बल्कि धर्मरक्षक कहे गए। यही कारण है कि महाभारत, रामायण और पुराणों में युद्ध का उद्देश्य केवल शत्रु-वध नहीं, बल्कि धर्म-संरक्षण और न्याय-स्थापना हुआ करता था। धनुर्वेद इस दृष्टि से शासन-तंत्र, प्रशासन-शास्त्र और लोक-कल्याण का आधार है।

धनुर्वेद के इस सम्पूर्ण स्वरूप से ज्ञात होता है कि यह केवल अस्त्र-शस्त्रों का ग्रंथ नहीं, बल्कि पूर्ण युद्ध-नीति, सामरिक विज्ञान, मानसिक अनुशासन, शारीरिक कौशल, संगठन, और धर्म-शासन का सर्वव्यापक अधिष्ठान है। इसका मूल उद्देश्य जीवन में संतुलन और समाज में न्याय की प्रतिष्ठा था। इसीलिए वैदिक काल से लेकर ऐतिहासिक काल तक धनुर्वेद भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रहा और आज भी यह सामरिक विज्ञान की मूल प्रेरणा का स्रोत है।

सारत: धनुर्वेद वैदिक परम्परा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपवेद है, जो केवल शस्त्र-विद्या नहीं, बल्कि संपूर्ण युद्ध-विज्ञान, शासन-नीति तथा धर्म-संरक्षण का दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है। इसे मुख्यत: यजुर्वेद का उपवेद माना गया, किन्तु दैविक अस्त्र-विद्या के कारण अथर्ववेद से भी इसका सम्बन्ध स्वीकार किया गया। इसके अन्तर्गत धनुष-बाण मात्र नहीं, बल्कि सभी अस्त्र-शस्त्र, व्यूहरचना, सैन्य-संगठन, आक्रमण-

रक्षा, शारीरिक-मानसिक अनुशासन, और राजनैतिक कार्य-व्यवस्था का विस्तृत विज्ञान समाहित है। महाभारत व अग्निपुराण में वर्णित अंगों से सिद्ध होता है कि धनुर्वेद केवल युद्धकौशल नहीं, बल्कि नैतिकता, युक्ति, शक्ति-संतुलन, विवेक और अनुशासन का सम्पूर्ण प्रशिक्षण देता था।

धनुर्वेद का उद्देश्य सत्ता या विनाश नहीं, बल्कि धर्म की स्थापना, न्याय की रक्षा, और समाज की सुरक्षा रहा। इसकी शिक्षा में दीक्षा, चरित्र-निर्माण, मानसिक धैर्य, एकाग्रता और संकल्पशक्ति जैसे आध्यात्मिक तत्त्व भी सम्मिलित रहे।

अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि धनुर्वेद भारतीय संस्कृति का ऐसा विज्ञान है जिसमें धर्म, नीति, शक्ति, संगठन, शासन और आध्यात्मिकता सभी का अद्भुत समन्वय प्राप्त होता है। यह अतुल्य ग्रन्थ न केवल युद्धकला का, बल्कि मानवीय और सामाजिक जीवन-व्यवस्था का भी मार्गदर्शक है।

ꕥꕥꕥ

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *आयुर्वेद के उपवेद - सूश्रुत संहिता, चौखम्बा संस्कृत सीरीज़ ऑफिस, वाराणसी, 2002*
2. *महाभारत - भीष्मपर्व, द्रोणपर्व, कर्णपर्व, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2018*
3. *अग्निपुराण (धनुर्वेदाध्याय), चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 1980*
4. *विष्णुधर्मोत्तर पुराण - चित्र, नाट्य, धनुर्वेद के रूप, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1967*
5. *भारतीय साङ्गीतिक ग्रन्थ -'शस्त्रविद्या', विश्वनाथ शर्मा, राजस्थान साहित्य मंडल, जयपुर, 1973*
6. *धनुर्वेद: एक पुरातन विज्ञान, डॉ. श्यामलाल पाण्डेय, भारतीय पुरातत्व अनुसंधान परिषद, दिल्ली, 1996*
7. *धनुर्वेद सार संग्रह, पं. हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीताप्रेस, गोरखपुर, 2001*
8. *मनुस्मृति, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1978*
9. *वैदिक युद्धकला और धनुर्वेद, डॉ. लक्ष्मीधर दुबे, भारती विद्या प्राच्य प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988*
10. *अस्त्र-शस्त्र विज्ञान, ब्रह्मानन्द सक्सेना, नागर प्रकाशन, अजमेर, 1999*
11. *महर्षि दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश, आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली; 1875 (प्रथम संस्करण)*
12. *डॉ. रामनाथ वेदालंकार, दयानन्द सरस्वती: चरित्र और विचार, गोपालन प्रकाशन, इलाहाबाद; 1954*
13. *स्वामी ओमकार, वेदान्त और योग दर्शन, भारत साधक प्रकाशन, हरिद्वार; 1962*
14. *डॉ. भगवानदास, भारतीय दर्शन की भूमिका, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी; 1933*
15. *पण्डित लेखराम, आत्मानुभव और योग साधना, आर्य प्रकाशन निधि, लाहौर; 1898*
16. *डॉ. गोविन्द दास, वेद और योग, नागर प्रकाशन, जयपुर; 1972*